Chapter-7

सप्तम अध्याय

अखा की भाषा

सप्तम अध्याय

अखा की भाषा

प्रस्तुत अध्याय में संत अखा की भाषा से संबंधित निम्नलिखित विषयों पर विचार किया जायेगा -

१. अखा की भाषा का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन ।

२. अखा की भाषा का व्याकरणिक अध्ययन ।

३. अखा की भाषा का शब्द समूह ।

४. अखा की भाषामें प्रयुक्त मुहावरे और कहावतें ।

५. अखा की भाषा की अभिव्यंजना शक्ति ।

साहित्य शास्त्र के विद्वानों का यह मत होता है कि संतों की भाषा का रूप विद्वतापूर्ण एवं सुस्थिर नहीं होने के कारण इनकी भाषा का विस्तृत अध्ययन नहीं किया जा सकता । किंतु यह भी सत्य है कि चाहें संतों की भाषा में पिंगल एवं व्याकरण के नियमों का दृढ़तापूर्वक पालन न किया गया हो किंतु उसमें स्वानुभूति एवं अभिव्यक्ति की स्वाभाविकता होने के कारण सामान्य भाषा व्यवहार के नियमों का निर्वाह अवश्य हुआ होता है । इस प्रकार उनकी भाषा में भाषा वैज्ञानिक एवं व्याकरणिक अध्ययन की विपुल सामग्री समाहित होती है । अतः उनकी भाषा के विस्तृत अध्ययन की महत्वपूर्ण आवश्यकता बनी रहती है । यहाँ उपर्युक्त विषयों का अध्ययन संक्षेप में एवं क्रमशः प्रस्तुत किया जायेगा ।

अखा की रचनायें खड़ी बोली से अधिक व्रज भाषा में होने के कारण यद्यपि प्रस्तुत अध्ययन व्रज भाषा को केन्द्र में रखकर किया गया है तथापि यथास्थान खड़ी बोलीके भी उदाहरण दिये गये है ।

१. अखा की भाषा का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन

सुविधा की दृष्टि से प्रस्तुत अध्ययन को दो भागों में निर्दिष्ट किया गया है -

: क : [१] स्वर प्रयोग और [२] व्यंजन प्रयोग ।

[क] स्वर - प्रयोग

स्वर ध्वनि परिवर्तन

ह्रस्व स्वरों का दीर्घत्व:- 'इ' का 'ई' : निरंजन-नीरंजन ।सं०प्रि० ११०।

हरि : हरी । सं०प्रि० १२२।

बिना:बीना ।सं०प्रि०१२५।

पंडित:पंडीत ।सं०प्रि० ३७।

दीर्घ स्वरों का ह्रस्वत्व :- 'ई' का 'इ' - देहदर्शी :देहदशि ।सं०प्रि० ४४ ।

देही :देहि ।सं०प्रि० ७३ ।

'है' का 'हे' है : हे । सं०प्रि० २६ ।

स्वरागम:- अग्रस्वरागम :- परस: अपरस ।सं०प्रि० ५५ ।

मध्यस्वरागम :- कहो : कोहो । सं०प्रि० ८० ।

परब्रह्म: पारब्रह्म । असंत अंग १५ ।

अंत्य स्वरागम:- विहंग :विहंगा । ब्र०ली० चो०७ ।

अपना: अपनाई ।सं०प्रि० २१५ ।

३

स्वर लोप:-

अग्रस्वर लोप :- और : ऊर । सं० प्रि० १२१।

मध्य स्वर लोप:- परम : पर्म । सं० प्रि० १२२।

अंत्यस्वर लोप:- भानु- भान : भांन । सं० प्रि० ११२ ।

चिंतामणि : चिंतामण । सं० प्रि० ५६ ।

स्वरों का विगुणत्व :- बहुत : बहोत । सं० प्रि० १३ ।

उपमा : ओपमा । लालन अंग, १८ ।

स्वर विपर्यय :- पिछे : पाछे । ब्र० ली० छंद ८ ।

कोई : कोउ । सं० प्रि० ११५ ।

" ऋ " का " र " में परिवर्तन :- वृक्ष : रुख । पूर्वजन्म अंग -६ ।

ऋतु : रत । कृपांग २, १० ।

स्वर का व्यंजन में परिवर्तन :- अति : अत्य । सं० प्रि० १५ ।

जाति : जात्य । सं० प्रि० २१ ।

। ख । व्यंजन- प्रयोग

:क: व्यंजन -ध्वनि परिवर्तन

संयुक्त का वियुक्त रूप :- प्रत्यक्ष : परतक्ष । सं० प्रि० ६ ।

प्रकरण : परकरण । सं० प्रि० १०६ ।

कृत्रिम : करतम । सं० प्रि० १०४ ।

प्रमान : परमान । सं० प्रि० ७ ।

व्यंजन विपर्यय :-	भ्रम : भर्म । सं० प्रि० २५ ।
	न्यनू : नुन्य । सं०प्रि० २६ ।
	वृध्धे : व्रध । सं० प्रि० ६१ ।
	श्रुत्य : सूर्त्य । सं०प्रि० १२४ ।
घोष में अघोषत्व :-	लक्ष्मी : लछ्यमी ।सं०प्रि० १०३ ।
	अलक्ष्य : अलछ्य । सं० प्रि० ५१ ।
अघोष में घोषत्व:-	सिंह : सिंघ ।सं०प्रि० ११६ ।
व्यंजन लोप :-	
अ. आदि व्यंजन लोप :-	स्वभाव : सुभाव । सं०प्रि० १००।
	स्त्री : त्रि । सं०प्रि० १४ ।
आ. मध्य व्यंजन लोप :-	अलक्ष्य : अलख । जकडी १८ ।
	सज्जन : सजन । सं०प्रि० १०३ ।
इ. अंत्य व्यंजन लोप	पाव : पाउ । अनभे अंग ६ ।
	ठहेराव : ठेहेराउ । सं०प्रि० १३८ ।
व्यंजनों का विगुणत्व:-	विषय: विषे । सं०प्रि० १३२ ।
	संशय : ससे । सं०प्रि० ६६ ।
	सासे : संसो । सं०प्रि० ६६ ।
	अनुभव: अनभे । सं०प्रि० १३६ ।

व्यंजनागम: हाथ: हाथ्य । सं०प्रि० १३२ ।

कोविद : कोविध । सं०प्रि० ८६ ।

बुंद : बुंदन । सं०प्रि० २२ ।

कर : कर्‍य । मो०मं ०अंग १ ।

वर्ण परिवर्तन

१. 'क' का 'ग' :- मूक : मुंगा । सं०प्रि० २३ ।

२. 'ख' का 'ष' अखो : अषा । हिन्दी पद परिशिष्ट ।

३. 'ग' का घ गुसाईं : घुंसाईं । सं०प्रि० ६० ।

४. 'ग्न' का 'ज्ञ' अग्नि : अज्ञी । विज्ञान अंग २६ ।

५. 'च' का 'क' आलोचना : आलोकना । सं०प्रि० ४ ।

६. 'भ' का 'च' सुभ : सुच । सं० प्रि० ११।

७. 'द' 'व' भेद : भेव । सं० प्रि० २६ ।

८. 'न' का 'ण' वर्णन : वर्णण । अनर्थ अंग ४ ।

९. 'प' का 'फ' पुनि : फुनि । भरोसा अंग५।

१० 'फ' का 'ह' मुक्ताफल : मुक्ताहल । सं०प्रि० ५६ ।

११. 'य' का 'ज' यौवनता : जोबनता । सं०प्रि० ६३ ।

१२. 'ड़' का 'र' खेलाड़ी : खेलारी । शब्द परीक्षा अंग १० ।

१३. 'ल' का 'र' पीलो : पीरो । सं०प्रि० १११ ।

१४. 'व' का 'ब' प्रवीण : प्रबीन । अनर्थ अंग ४ ।

१५ 'श' का 'स' दशों दिश : दसों दिश । सं०प्रि० १४ ।

आकाश : आकास । परीक्षा अंग १ ।

१६. ˆ ष ˆ का ˆ ख ˆ — षट् दर्शन : खट् दर्शन । अदबद अंग १६ ।

१७. ˆ च ˆ का ˆ ख ˆ — मक्षे : मखे । ब्र०ली० । छंद ४ ।

१८. ˆ च ˆ कों ˆ ष ˆ — साक्षी : साषी । सूफ अंग ७ ।

१६. ज्ञा ˆ का गन्या ˆ — संज्ञा : सांगन्या । अदबद अंग १० ।

अनियमित परिवर्तन

व्यतिरेक : वित्रेक । वित्रेकवेचा अंग ।

चातक : चात्रुक । सं०प्रि० १२ अ ।

स्वतंत्र : सतंतर । सं०प्रि० ३४ आ ।

अमृ : अमृ । सं० प्रि० ८४ ।

पराक्रम : प्राक्रम । सं० प्रि० १३७ ।

सुवर्ण : सोव्रण । सं० प्रि० १३६ ।

इच्छा : ईछा । सं० प्रि० १३० ।

तृतीय : त्रती । सं० प्रि० १२७ ।

२. अखा की भाषा का व्याकरणिक अध्ययन

प्रस्तुत विभाग में अखा द्वारा प्रयुक्त संज्ञा, सर्वनाम, लिंग, वचन, अव्यय, विशेषण और क्रिया रूपों का अध्ययन संक्षेप में प्रस्तुत किया है ।

. संज्ञा

अखा की भाषा में प्रयुक्त संज्ञाओं का अध्ययन दो प्रकार से किया जा सकता है - [१] अ, आ, इ, ई, उ, ए, ऐ, आदि के अंत की दृष्टि से और [२] संज्ञा के व्यक्तिवाचक, जातिवाचक, द्रव्यवाचक और भाववाचक आदि भेद की दृष्टि से ।

क. अकारांत — पटंबर । सं०प्रि० ४६ ।, सुमिरन ।सं०प्रि० २४ ।
तज्ञ । सं०प्रि० १२० ।, मंगल । सं०प्रि० २५ ।

आकारांत — आपा । सं०प्रि० ६८ ।, चितेरा । सं०प्रि० ५१ ।
धोखा । सं० प्रि० ७० ।, कौआ । सं०प्रि० ५६ ।

इ- ईकारांत — अगिनि । सं०प्रि० २१ ।, अहि । सं०प्रि० ४२ ।
पक्षी ।सं०प्रि० ११५ ।, ससी । सं० प्रि० १२३ ।

उकारांत — अंबु । सं०प्रि० १५ ।, भाउ । सं०प्रि० ६१ ।
नाउ। सं०प्रि० ८१ ।, गेहु । सं० प्रि० ३ ।

ए-ऐकारांत — विषै । सं०प्रि० २६ ।, हिरदै । सं०प्रि० ४ ।
आलै । सं०प्रि० २५ ।

ख. संज्ञा के भेद

१. व्यक्तिवाचक — शुकदेव ।सं०पि० ८, २३ । हनुमान । सं०प्रि० १३७ ।
कर्ण । सं०प्रि० ६, ११ । कृष्ण । सं० प्रि० १३६ ।
वसिष्ठ । सं० प्रि० १३६ । रघुनंदन । सं०प्रि० २२ ।

२. जातिवाचक — मृग । सं०प्रि० १०६ । अलुक । सं०प्रि० १२५ ।
सिंह । सं०प्रि० ११६ ।, सेवक । सं०प्रि० ५१ ।
अपत्य । सं०प्रि० १०१ ।

३. समूहवाचक — [हंस की] टोरी [टोली] । सं०प्रि० ५७ अ ।
[सगार की] गोती [गोत्र] ।सं०प्रि० १६ ।

४. द्रव्यवाचक

लक्ष्मी । सं०प्रि० ६२ ।, दूध । सं०प्रि० ५७ ।
रसायन । सं०प्रि० ६४ ।, छाछ । सं०प्रि० ५७ ।
बुंद । सं०प्रि० ८१ ।, पानी । सं०प्रि० ५३ ।

५. भाववाचक

अखा में " ता ", " आई ", " ओरी ", " त्व "
आदि प्रत्ययों से बनी भाववाचक संज्ञाएँ मिलती हैं ।

ता - मानीनता । सं०प्रि० १ ।, खलता । सं०प्रि० ६३ ।
पूरनता । सं०प्रि० ६२ ।, यौवनता । सं०प्रि० ६१ ।

आई - चतुराई । सं०प्रि० २१ ।, अच्छाई । सं०प्रि० १५ ।

ओरी - ठगोरी । सं०प्रि० १३० ।, ठठोरी । सं०प्रि० ५७ ।

त्व - ममत्व । सं०प्रि० ६८ ।

कहीं कहीं संज्ञाओं का मालारूप में भी प्रयोग किया गया है ।

" परब्रह्म राम नारायण नरहरि जाके हे नाम अनंत अपारा । "

- सं०प्रि० ४

सर्वनाम

पुरूषवाचक सर्वनाम

अ. उत्तम पुरूष :

कर्ताकारक : मैं नहीं मे नहीं मैं नहीं प्यारे । सं०प्रि० ४१ ।

कर्मकारक : ना मूही व्यजण व्यापार (उपासन) । सं० प्रि० ६० ।

६.

आ. मध्यम पुरूष

संबंधकारक : जो तेरो भाव भयो शीव रूप । सं०प्रि० ६ ।

अधिकरण : समास होए मन तो में । सं० प्रि० २६ ।

इ. अन्य पुरूष :

अधिकरणकारक : ता हे में मोती तुं पोइले प्यारे । सं०प्रि० २२ ।

संबंधकारक : गुरु गोव्यंद नहीं नर न्यारा सोनारा-
सेवे सो सबे सुच पावे । सं ०प्रि० १७ ।

निजवाचक :

कर्ताकारक : आपि ही आनंद कंद । सं०प्रि० १०६ ।

अपादानकारक : आप थें नहीं को आन । सं०प्रि० १११ ।

अनिश्चयवाचक :

: कोउ हे कर्म धर्म के ग्यांनी कोउ हे मंत्र उपासनहारा । सं०प्रि० २७ ।

जाने को संत सोनारा । सं०प्रि० २६ ।

संबंधवाचक :

संतप्रिया सुख वरधनी जाके हिरदे हेत । सं०प्रि० ३ ।

जो मन मान्यो तो जीव सबे... ।सं०प्रि० ४३ ।

प्रश्नवाचक :

काहा ग्यांन क्यों नंधो मूख बाढ़ी । ।सं०प्रि० ६ ।

क्वन तूं नीद सोयो रे गूमांनी। । सं०प्रि० १६ ।

लिंग :

: क : अखा की रचनाओं में इ, आ, इनी, इन आदि प्रत्ययों के द्वारा पुलिंग से स्त्रीलिंग बने हुए शब्द मिलते हैं।

" इ " के द्वारा देव -- देवी ।सं०प्रि० ११६ ।

कुमार -- कुमारी । सं०प्रि० २२ ।

भील - भीली । सं०प्रि० २२ ।

पु-लिंग के अकारांत को आकारांत कर

राम - रामा ।सं० प्रि० १५ ।

श्याम - श्यामा ।सं० प्रि० १५ ।

" इनी " के द्वारा

स्वामी -- स्वामिनी । ब्र०ली० पृ०८८ ।

सांप - सांपिनी । अ०वा० पृ० १६५ ।

" इन " के द्वारा

नाग -- नागिन । अ० वा० पृ०१६५ ।

बाघ - बाघिन । अ०वा० पृ० १६५ ।

वचन

अखा में बहुवचन के विभिन्न रूप मिलते हैं। एकवचनवाले कई शब्द बहु-वचन में प्रयुक्त हुए हैं।

पंडित । सं०प्रि० ३७ ।, नेन । सं०प्रि० ४२ ।

राय । सं० प्रि० १३१ ।, श्रवन । सं० प्रि० ४२ ।

न प्रत्यय लगाकर

लोक - लोकन । सं० प्रि० ८० ।, संत - संतन । सं०प्रि० ६७ ।

जंत - जंतन । सं० प्रि० ११५ ।

इयां लगाकर

पात- पतियां । सं०प्रि० ३८ ।, बात-बतियां । सं०प्रि० ३८ ।

संज्ञावाचक विशेषण लगाकर

कोटि कर्म ।सं०प्रि० ६५ ।, बारूं मेघ । सं०प्रि० ६६ ।

दसोंदिस । सं०प्रि० १४ ।, चारूं खाण । सं० प्रि० ७ ।

अव्यय

स्थितिवाचक

जीव जंजाल बला मरी भीतर, उपर आछी सी बात बुयराजे ।सं०प्रि० ५७

देह दरपण दीयो मूण आगे ।। सं० प्रि० ७१ ।

दिशावाचक

नाना रंग ढींग रही जूं देखावे । सं०प्रि० १२६ ।

धोखा पर्यो देही दूर बतावे ।सं० प्रि० ६६ ।

कालवाचक

अटपटी आद्य अनाद्य चली ।सं० प्रि० ३६ ।

अवधिवाचक

अजहु सोनारा राम भजन की बात नहीं । सं०प्रि० ६१ ।

पौन ५ पुन्यवाचक

परतदा राम पलपूल पूरन । सं० प्रि० २८ ।

द्वंद का फंद बढे जु दिनुदिन ।सं०प्रि० ७५ ।

अधिकताबोधक

हे चीद अरणव भरपूर । सं०प्रि० ३ ।

सब बोली सो बोले ।सं० प्रि० ७६ ।

न्यूनताबोधक

नीर को नेक न लागे समागमु । सं०प्रि० ५८ ।

जांनंत नही रंच भक्ती बेरागे । सं०प्रि० ५५ ।

श्रेणिवाचक

एही अनुक्रम अखा भयो गोचर । सं०प्रि० ३६ ।

तुलनावाचक

जीव न करे अघ एतनो जे तो एक रामज राम । सं०प्रि० ६६ ।

८) सम्बधवाचक

स्वे नर पाये जो आवे विचारा । सं०प्रि० १६ ।

सो तिरेगो जे नाप चढ़ेगो । सं० प्रि० ८१ ।

समुच्चयबोधक

सो सब माया बडी और छोटी ।सं०प्रि० १२१ ।

ज्योंपि एक कहुं दुजा परगट पाईअत ।सं०प्रि० १३४ ।

विस्मयादिबोधक

अजू ! काहा भयो दूध जैसी छाछ्यकी धोरी । सं० प्रि० ५६ ।

विशेषण

सार्वनामिक विशेषण

कई सर्वनामों का प्रयोग, विशेषण के रूप में भी होता है। सार्वनामिक विशेषण के अंतर्गत ऐसे शब्दों का समावेश किया गया है।

पुरुषवाचक रूप

सो नर कु मत मानो । ।सं०प्रि० ६० ।

आनत है अपने घर कुता ।सं०प्रि० ६६ ।

प्रश्नवाचक

क्वने तूं नींद सोयो ? ।सं० प्रि० १६ ।

निश्चयवाचक

ता घर को पहचान न आवत ।सं०प्रि० ६१ ।

अनिश्चय

अन्य उपासन पेढो रचा में । सं०प्रि० ५६ ।

केती कहुं जीव बुद्ध्य की बात । सं०प्रि० ६४ ।

गुणोत्कर्ष

माया के रंग मनोहर । सं०प्र० ५० ।

सीर स्वेत बुद्य कारी की कारी । सं०प्र० ६३ ।

गुणापकर्ष

नीच में नीच कुल । सं०प्र० २१ ।

दोहागन कंथ बिछोरी । सं०प्र० २६ ।

निश्चित संख्या बोधक

लोक चौद को व्याप । सं०प्र० ३६ ।

तीन पचास जीउ ज्यों पे कौआ । सं०प्र० १२६ ।

क्रमवाचक

जौपें एक कहूं दूजा परगट पाईअत । सं०प्र० १२४ ।

एक अरु दो कहेंत होतत्रती । सं०प्र० १२७ ।

अनिश्चित संख्यावाचक

बोहोत जीये तें कीनो काहा । सं०प्र० १३ ।

और सबे मनकीन । सं०प्र० ३४ ।

परिमाण बोधक

भ्रूजे धरा जाके नेक कोपे । सं०प्र० ११ ।

जानत नहीं रंच भक्ति वेरागे । सं०प्र० ५५ ।

विशिष्ट प्रयोग

अनेक विशेषणों के उपर्युक्त प्रयोग द्वारा भावव्यंजना में वृद्धि

मिथ्या दृष्ट मोटी ।सं०प्रि० १२१।

संज्ञा शब्दों का विशेषणवत् प्रयोग

हंस वरण, मन, मधुप । सं०प्रि० १५ ।

विशेषण का सूची रूप में प्रयोग

अनाम अरुप अवाच्य असंग जा

मध्य नहीं मन बाचगती । सं०प्रि० १२७ ।

पांच, पचीस, पचास, पंचान् कीधौ

कोटि कलप जीउ कबे कोउ । सं०प्रि० १३१ ।

क्रिया

अखा की भाषा का प्रस्तुत अध्ययन [अ] धातु, [आ] कृदंत, [इ] वाच्य और [ई] कालरचना; इन चार विषयों को केन्द्र में रख कर किया गया है ।

[अ] धातु

संस्कृत धातु - अखा द्वारा प्रयुक्त धातु रूपों में से कई धातु रूप संस्कृत के हैं ।

सदगुरु चरण शरण ग्रहेबीन भवजल आर सो बहुत बरासे । सं०प्रि० ६ ।

जैसी रसना भाषा करी भाषित, तैसी तो ले न सकत अगरा ।सं०प्रि०३३।

[रेखांकित क्रियायें संस्कृत धातुओं से निर्मित हैं : ग्रह, भाष्]

हिन्दी धातु

ताही को विस्तार विध्य भाषा करके कहुं । सं०प्रि० ३।

पंडित राज बड़े भट बैकुंठ कौन चलयो जनूनिसान बजाई । सं०प्रि० २१।

[रेखांकित क्रियायें हिंदी धातु की है, करना, चलना, बजाना]

यौगिक धातु

ज्युं अही के अंग होत जरा सों अंग ही ते आई उपजी । सं०प्रि० ४३।

संगते रंग न फीरी कुबुधीको बक मीलयो वैसे हंस की दोरी ।सं०प्रि० ५७।

आ. कृदंत

स्थूल रूप से कृदंत को दो भागों में विभाजित कर सकते हैं – विकारी और अविकारी । विकारी कृदंत में क्रियार्थक कृदंत तथा अविकारी कृदंत में पूर्वकालिक, तात्कालिक, अपूर्णक्रियाद्योतक तथा पूर्णक्रियाद्योतक कृदंत का समावेश होता है । अखा की रचनाओं के यहाँ कुछ उदाहरण दिये जाते हैं ।

विकारी कृदंत

कर्तासूचक कृदंत

बाजी बहुत बनाइ है आपे खेलनहारा । श०प० ११ ।

कोउ है धर्म धर्म के ज्ञानी कोउ है मंत्र उपासनहारा ।

– सं०प्रि० २७

वर्तमानकालिक कृदंत

राम नहीं जु नादान अनुपे राम नहीं जुअयान खेलवना । सं०प्रि० १०६

नाचन गावन तें राम न रीझत, राम नहीं पानी पाहान- ।सं०प्रि०१०६।
-मेलवना ।

भूतकालिक कृदंत

ताते भयो नहीं भव को भंजन नाम पुरंजन मान्य कहायो । सं०प्रि०१०३।

अर्धमात्रा अखो केहे कीनो प्रगट गोप ।सं०प्रि० २।

अविकारी कृदंत

पूर्वकालिक

ओस को नीर त्युं धन जोबन ज्यों घन में बीजुरी मुसुकानी । सं०प्रि० १६।

हे चीद अर्णव भरपूर हुं चिरि चंच करिके ग्रहु । सं०प्रि० ३।

पूर्णक्रियाद्योतक

रे मन राम भजन की ठोर भजी रंगरंगीली सी रामा । सं०प्रि० १५।

जोबन गयो जरा ठनयो सीर स्वेत भयो बुद्धि कारी की कारी ।सं०प्रि०६४।

भविष्यकालिक

कोटि कर्म छिनमां दहे एही प्रभु को धर्म । सं०प्रि० ६६।

दिनकर दीप दिखावे को मुरख दीप बीना कहा रथ अडेगो । सं०प्रि० ८१।

ङ. वाच्य

सीता की सुद्ध लीनी लंक जारी । सं०प्रि० १३६।

पंडित बाद बदे ज्युं बहु बिधुय । सं०प्रि० १३६ ।

चात्य चकोर की देखके, ज्युं अग्नि कु लागी मदिका । सं०प्रि० १३८।

ई. काल रचना

सामान्य वर्तमान

नामें घट बिना घट नाहीं जैसे देह संग होत उछाही । पद १६।

आपा ना मेटुं थापा न थापुं में मदमाता हुं मेरी खुशी का । सं०प्रि०८७।

पूर्ण वर्तमान

हे कछु और भई कछु ओरे । सं०प्रि० ४०।

पंछीकु तो अटक टली है । साखी।

सामान्य भूतकाल

ज्ञान बिना भटक्यो गिरि गह्वर । सं० प्रि० २५।

जब गरज्यो सिंह अखो कहे । सं०प्रि० २५।

पूर्ण भूतकाल

आप खोहा गया, चाहा राख्या था मन्न का । सं०प्रि० १३८।

सामान्य भविष्यकाल

दिनकर दीप दिखावे को मुरख दीप विना कहा रथ अडेगो । सं०प्रि०१३८।

अखा चढाउ काहा नावकु तारे सोही तिरगो जे नाव चढेगा ।सं०प्रि०८१।

संयुक्त क्रिया

धन दारा सुत रहेत पडे । सं०प्रि० ३७।

अंगही ते आई उपजी । सं०प्रि०४३।

पुनरुक्त क्रिया

कहत अखा जो पुकारी पुकारी । सं०प्रि०७६।

बोलत रहे जुं बिचारी बिचारी । सं०प्रि० ८२।

३. अखा की भाषा का शब्द समूह

अखा की भाषा के शब्द भंडार का वर्गीकरण इस प्रकार हो सकता है : [१] संस्कृत के तत्सम्, अर्ध तत्सम् और तद्भव [२] विदेशी [३] समकालीन भाषाओं के शब्द और [४] देशज।

संस्कृत तत्सम शब्द

कवि द्वारा प्रयुक्त संस्कृत तत्सम शब्दों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है :

[१] पारिभाषिक।

[२] व्यावहारिक।

अ. पारिभाषिक तत्सम शब्द

कवि की रचनाओं में औपनिषदिक विचार धारा एवं अद्वैत - दर्शन का प्रतिपादन होने के कारण स्थान-स्थान पर उपनिषद्, गीता, पुराण तथा योग, सांख्य आदि शास्त्रों के प्रसंगो एवं प्रक्रियाओं के उल्लेख किये गये हैं। इन उल्लेखों

में ब्रह्म, माया, जीव, जगत, ज्ञान, भक्ति, योग आदि विषायक अनेक पारिभाषिक शब्द अथवा शब्द समूहों का विपुल प्रयोग मिलता है। इस शब्द राशि को सुविधा की दृष्टि से निम्न रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है :

ज्ञान मार्ग में रूढ़ शब्दावली

निर्गुण । ब्र०ली० पृ०८८। अविद्या ।सं०प्रि० १४ पृ०१४१। हंसकला ।सं०प्रि०१६ पृ० १४५ ।

निरंजन । ब्र० ली० पृ०८७। गुरुगम । खोजी अंग पृ०३२४ ।

सद्गुरु । गुरु अंग पृ०२६८ । ~~मनोतीत ।सं०प्रि० १२५, १४० ।~~

मनातीत ।सं०प्रि० १२५, १४० ।

समझ । समझ अंग, पृ० १७६ ।

सगुण । सं०प्रि० ४३। पृ०१४८ ।

विदेह । विदेह अंग, पृ० ३६१ ।

गुरुज्ञान । सं०प्रि०, ११, पृ०१४० ।

निर्गुण । सं०प्रि० ४३, पृ०१४८ ।

योग मार्ग में रूढ़ शब्दावली

नाभिकमल । भजन १५, पृ०११ ।, सुषुमना । भजन १५, पृ० ११ ।,

गगनमंडल । भजन १५, पृ० ११ ।, दशम द्वार । भजन १५, पृ० ११ ।,

त्रिवेणी । भजन १५ पृ० ११ ।, इड़ा । भजन १५, पृ०११ ।,

हंस । भजन १५, पृ०११ ।, पिंगला । भजन १५, पृ०११ ।

शुन्य । भजन १५, पृ० ११ ।

भक्तिमार्ग में रूढ़ शब्दावली

पतीतपावन	भजन २६ पृ०१३०	पुष्टि	अ०गी०कडवक ४०	प्रतिवृता	सती पृ० ३३६
दीनबंधु	"	रास	"	सती	"
हरिकृपा	कृपा, पृ० २२१	जार	"		
सेवा	भक्ति विवेक, पृ०२२०	गोपी	"		

आ. व्यावहारिक संस्कृत तत्सम शब्द

इन शब्दों को पुन: दो भागों में विभक्त किया जा सकता है -

[१] वे शब्द जो केवल दो या तीन अक्षरों से बने हैं और कोमल तथा सरल हैं :

सर्वातीत	पद २, पृ० ६३	योगेश्वर	पद ६ पृ०६४	सेवक	पद३, पृ०६३
अवाच्य	"	आनंदमय	"	रघुनंदन	सं०प्रि० २३ पृ० १४३
अहंता	"	मुनिश्वर	"	दिनकर	सं०प्रि०२३ पृ० १४३
पूजक	पद ३, पृ०६३	पंड़ित	पद ६, पृ० ६४	माया	ब्र०ली० छं ४ पृ०८८

[२] वे शब्द जो अधिक अक्षरों एवं शब्दों के मेल से बने हैं और क्लिष्ट है। किंतु ऐसे शब्द बहुत कम है और इनका उपयोग कवि ने ऐसे स्थान पर किया है जहाँ इनकी आवश्यकता है। अत: उपर्युक्त स्थान पर व्यवहृत होने के कारण ये शब्द विषय निरूपण में अनुकूल बन पड़े हैं -

अध्यारोप	ब्र०ली० छंद १ पृ० ८७	प्रत्यक्ष	सं०प्रि० छं०७ पृ० १३६
दृष्टोपदेश	"	प्रपंचपार	पद ८, पृ० ६६
सत्यस्वामिनी	ब्र०ली० छंद १ पृ०८८	महापदमध्य	पद १०, पृ०६७

तत्वमसि । ब्र०ली० छं०७, पृ०६० ।, शुक्सनकादिक । पद १६ पृ०६८ ।
विधिनिषेध । पद १२, पृ० ६८ ।, ध्येयध्याता । पद १२, पृ०६८ ।
जीवनमुक्त । पद १२ पृ०६८ ।, अंतर दृष्टि । पद १५ पृ०६६ ।

कवि द्वारा प्रयुक्त इन दोनों प्रकार के तत्सम शब्दों के अध्ययन से एक बात स्पष्ट होती है कि अखा के समय - विक्रम की १७ वीं सती तक आते आते भारतीय भाषाओं [गुजराती, खड़ी, ब्रजादि] की प्रवृति अर्वाचीनता अर्थात् तत्समता की ओर बड़े वेग से बढ़ रही थी ।

अर्ध तत्सम शब्द

जिन तत्सम शबदों के उच्चारणों में किसी प्रकार की कठोरता एवं कर्कशता का अनुभव हुआ है उनको कवि ने विषय, प्रसंग एवं भाव के अनुसार सरल रूप देकर अपनी काव्य भाषा के लिये उपर्युक्त बनाया है । ऐसे शब्दों का प्रयोग प्राय: उन्हीं के स्थानों पर हुआ है जहाँ कवि भावावेग में मग्न हुआ है, बहा है और विषय के साथ तल्लीन हुआ है ।

[वर्षा] बरखा । पद ११ ।, अनुभे [अनुभव] ।पद १७ । करम[कर्म]पद१६
[पूर्व] पुरब । पद ११ ।, मरम [मर्म] ।पद-१८ ।,स्वतंतरी [स्वतंत्र]पद १५ ।
[मृतक] मरतक । पद १४ । धरम [धर्म] ।पद १६ ।
पुरणकामा : ~~पर्बकनमीने~~[पूर्णकामी] पद १७ ।
[मुक्ताफल] मुगताहल । सं० प्रि० पृ०७ ।, (गोस्वामी) घुसाईं । सं०प्रि० ६० ।
स्वे [स्वयं] ।सं०प्रि० ६१ ।

तद्भव शब्द

यहाँ तद्भव शब्दों से आशय उन शब्द रूपों से है जो मूलत: संस्कृत के थे किंतु मध्यकालीन भाषाओं की प्रकृति के अनुसार परिवर्तित होते होते नये रूप में सुस्थिर हो गये । ऐसे शब्दों को जन भाषा की निजी संपत्ति कह सकते हैं । अखा की बानी में प्रयुक्त प्रमु का तद्भव शब्द निम्न प्रकार के हैं ।

गयंद - गजेन्द्र । सं० प्रि० ८० ।, पाढ़ -- पर्वत । सं०प्रि० ।,

पाहान - पाषाण (~~पर्वत~~), । सं० प्रि० ८० ।, थापु -- स्थापना । सं०प्रि० ८७ ।

बाहामन - ब्राह्मण । सं०प्रि० ६२ ।, अलुक - उल्लुक । सं०प्रि० १२५ ।

~~सांमृथ-दुजा--द्वितीय-सामथ्र्य-। सं०प्रि०-१२७~~ ।

दुजा -- द्वितीय । सं०प्रि० १२७ । सांमृथ - सामर्थ्य । सं०प्रि० १२४ ।

आन -- अन्य । सं०प्रि० १२१ । समथ -- सामर्थ्य । सं०प्रि० १११ ।

सीयरा - शितल । सं०प्रि० १०८ । न्यहचा - निश्चय । सं०प्रि० ५६ ।

रदा - हृदय । सं०प्रि० ५३ । अहरण -- उऋण । उपदेश अंग, पृ०२४१।

हदा - हृदय । सं०प्रि० ५१, पृ० १४३ ।

विदेशी शब्द

अखा की रचनाओं में विदेशी भाषाओं में से विशेषकर अरबी और फारसी के प्रचलित शब्द व्यवहृत हुए हैं। इन दोनों भाषाओं के शब्दों को संत अखा ने उनके मूल तत्सम रूप में न लेकर अपनी प्रकृति के अनुसार ढालकर अर्धतत्सम एवं तद्भव रूप में प्रयुक्त किया है। प्राय: एक ही वाक्य में दोनों भाषाओं के शब्द एक साथ भी व्यवहृत हुए हैं।

१. सीना साफ हुए बिना अखा रहे कहां राम १। चानक अंग, अ०फा०।

२. इस दीदे दीदार करूय जो तुं बंदे तुज यार। फा०फा०फा०।

तलब विहोणा तु रहा, हे हुजुर किरतार। शब्द परीक्षा अंग, अ०अ०।

३. मीर मेहेर और पादशा सब उनही के पास। वही० फा०फा०फा०।

४. भीस्त न दोजक दोउन चाहु। सं०प्रि० ८७, फा०फा०।

५. हाजरा हजूर हरि, जाकु हृदय नैन है। भजन ३२ अ०फा०।

६. दघू शरबत हजार पीवे और प्यास न भागे बिन पाणी। झूलना, ५८ अ०फा०।

७. जिसम इसम भी तेरडा है इसमें मेरा क्या लागे। ।झूलना ५५। अ०अ०।

८. हे बातिन और झाहिर देखे। ।झूलना ४४। अ०अ०।

समसामायिक भाषाओं के शब्द

अखा की हिन्दी भाषा में समसामयिक भारतीय भाषाओं में से विशेषकर राजस्थानी, गुजराती, एवं पंजाबी के संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, वचन, अव्यय, क्रिया, कारक आदि के रूप मिले हुए है। गुजराती अखा की मातृभाषा होने के कारण यह स्वाभाविक है कि हिन्दी रचनाओं में

गुजराती के विभिन्न शब्द रूप मिले हों । किंतु ऐसे शब्द बहुत कम है । उनकी गुजराती रचनाओं की भाषा को तो गुजराती विद्वानों ने " अर्वाचीन गुजराती भाषा "[१] बताया है किंतु उनकी हिन्दी रचनाओं में प्राप्त संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, वचन एवं क्रिया के कई रूप " पुरानी राजस्थानी " में प्राप्त रूपों के समान होने के कारण उन्हें " राजस्थानी " के अंतर्गत रखा गया है । अखा की रचनाओं में गुजराती की अपेक्षा " राजस्थानी " शब्द रूपों की अधिकता है । इन दोनों भाषाओं के अतिरिक्त अखा की भाषा कुछ पंजाबीपन भी लिए हुए है । यहाँ इन तीनों के उदाहरण प्रस्तुत किये जाते हैं ।

गुजराती

१. सर्वनाम : हुं । जकड़ी १६ ।, तमारा । सं०प्रि० ६४ ।

२. विशेषण : नाहाना । स्वे अंग ४ ।, मोह्टा । स्वे अंग ४ ।

१. आडी अवड़ी । जकड़ी २२ । डाहापण । आत्मज्ञानअंग १० ।

चौदा । नैरासी अंग ६ । आगला । नैरासी अंग ३२ ।

३. क्रिया : तपासे । तपास अंग १ ।, थाय । नैरासी अंग ४ ।

हीडि । जकड़ी २२ ।, डोह्ले । लक्षहीण अंग १२ ।

निमडा । सहेज अंग १७ ।

४. अव्यय : पण । दिशा अंग ४ ।

राजस्थानी

१. सर्वनाम : मुज । विरह अंग १० ।, मेरडा । गुरू अंग १ ।

तुज । जकड़ी २४ ।, तेरडा । भजन २०, ~~तने तों । जकड़ी १०~~ ।

---

१. कवि चरित के० का० शास्त्री, पृ० ५६६

२. विशेषण : घणेरी । जकड़ी २४ । लटकाडा । जकड़ी १२ ।

घणेरा । भजन ६ । मलपतडी । ।

३. संज्ञा : ढोला । जकड़ी १० । बिरहा [बिरह] । बिरहअंग ६ ।

ढोलन । जकड़ी १० । मेहा [मेघ] । विरह अंग ६ ।

साजाँ [सज्जन] । जकड़ी२०। बाँहां [बाँह] । फूलना ६६।

४. कारक ।अ। "का" के स्थान पर "कु"

जनका : जनकु ।सं०प्रि० ८२ ।

किनको : कोनकु । सं०प्रि० ६१ ।

नेनको : नेनकु । विरह अंग १६ ।

पंजाबी[1]

संज्ञा

हिरदे – पड़दा : हिरदे हरि हीलमिल रह्या पड़दे पेखे नाहीं । साखी, उपदेशअंग

लूण : लीन और लूण तिसे होय मीठा । फूलना १०० ।

सर्वनाम

ओहि [वही]: ओही बिराजे नाहीं अखाने । पद –४ ।

३. अव्यय

नेरे : चित्त फार्यो है तो चिद नेरो है । सं०प्रि० ६८ ।

ज्युं त्युं : ज्युं कान्त्युं ही अखा है निरंतर । पद –५

मीने : देखो ! चगड़े केरी पूतली मीने, क्या खाली ने खेले रच्या है ।फूलना-
१।

1. डॉ० प्रेमनारायण टंडन के "संत साहित्य" के आधार पर ।

क्रिया

भूतकाल: कीता – कात का आब आतश, कीता १ । फूलना ४ पृ०५५।

भविष्य : पासी – न्यारा पंथ सहेजे सुच पासी । पद १० । पृ०६७

लेसी – करम सांइ का, सो मान लेसी । फूलना १०६ । पृ०८४

देशज शब्द

देशज शब्दों में उन शब्दों को गृहित किया गया है जो विशेषकर गुजरात में रूढ़ हो गये हैं । ऐसे शब्दों में से "चौदा" । शुद्ध सोना ।, "छीडे ।चले । आदि शब्द "समसामयिक भाषाओं के शब्दों" के गुजराती विभाग के अंतर्गत दिये गये हैं । उनके अतिरिक्त निम्नलिखित शब्द और दिये जा सकते हैं –

गांगडू[1] । नहीं पकनेवाला अन्न-कण ।

फटोर[2] – । कच्ची आम ।

ढ़िगलियां[3] – । वस्त्र से बने खिलौने ।

घूघरी –[4] । "उत्तरायण" एवं अन्य विशिष्ट अवसरों पर पकाये जानेवाला जार-बाजरा का मिष्टान्न ।

गांगोडा[5] – गौ के थान में लगनेवाला जंतुविशेष ।

---

१. अखा न पाके गांगडू, जो जारे सोमण काठ । १ । ज्ञानदग्ध अंग, स० स० पृ०८४

२. ज्युं बाज गिराया अंब फल, सो पाके नहीं फटोर ।२।
– ज्ञानदग्ध अंग, अ०स० पृ०८४

३. छोकरियां ढ़िगलियां खेले । जकड़ी –३१, अ०स, पृ०४२

४. घूघरी मोतन की खाई रे । जकड़ी –१०, अ०स, पृ०२१

५. ज्युं गांगोडा गौथान का दूध छोड लोहु खात ।२।
– दुनिया अंग, अ०स, पृ०३०४

२८-१

अखा की भाषा में प्रयुक्त मुहावरे और कहावतें

मध्यकालीन गुजराती साहित्यकारों में मांडण बंधारा और संत अखा ने अपनी रचनाओं में कहावतों एवं मुहावरों को ऐसे जड़ा है जैसे अँगूठी में हीरा जड़ा होता है। मांडण बंधारा ने अपनी " प्रबोध बत्रिशी " में अपने समय की करीब करीब सभी कहावतों को प्रयुक्त कर इस क्षेत्र में अद्वितीय स्थान प्राप्त किया है। उनके देढ़ सौ वर्ष पश्चात् उस क्षेत्र में अखा ने अपनी हिन्दी एवं गुजराती रचनाओं में अपने समय की लगभग पाँच सौ से भी अधिक कहावतों का सुष्ठु प्रयोग किया है।

किसी कवि की बानी में कहावतों एवं मुहावरों के ऐसे विपुल प्रयोगों से उस कवि की सामाजिकता सूचित होती है। ऐसे कवि अपने आप ही जनता के ह्रदय में आसनस्थ हो जाते हैं। क्योंकि कहावतें एवं मुहावरे जनता की संपूर्ण सामाजिक एवं ऐतिहासिक अनुभूतियों के संक्षिप्त रूप होते हैं। ~~सं. उपाख्यान-उवक्खाण- प्रा०-~~

अखा ने कहावत या लोकोक्ति के लिए " उखाणु " [सं० उपाख्यान> उवक्खाण [प्रा०] > ओखाणो > उखाणु । गु० । शब्द का प्रयोग किया है[१]।

१. अ. अखा उखाणु साचुं थयुं, बोरां साटे घरेणुं गयुं।

-गु०सा० ना स्व० पृ० ४३

आ. तरणा ओथे डुंगर रहे, एवो उखाणो सहु को कहे

-३१५, छप्पा

दोनों भाषाओं पर कवि के समर्थ अधिकार के साथ साथ उनकी भाषा की लाक्षणिकता, व्यंजकता एवं प्रतीकात्मकता का भी परिचय प्राप्त करने के हेतु उनकी हिन्दी और गुजराती रचनाओं में प्रयुक्त कतिपय समान कहावतों को एक साथ रखकर परीक्षण किया जा सकता है –

हिन्दी

१. अखा उतरता उदधि और कठे बांधी सत्य ।७।ज्ञा०दृ० अंग
२. सुपने में सरपुं डस्या तो जाग्रत कहा उपचार ।११। ''
३. ज्युं शल्या डुबाए चीतरी तारे तुंबा मों बंद ।२। कुबुध्दि अंग.
४. सो तुंबा तारे तरे जब गर्भ गया बीच सूक ।५। गुरु अंग
५. गलीया बेल पाल्या पिया ।२। कृपा अंग
६. सीखी सुनी गल मारे गुसाईं ज्युं जोग पवन कुंभ खाली सो गाजे ।६०।
७. बिन प्रत्यक्ष प्रमाण अखो केहे, बिन दुल्हा सोहे ज्युं बराती ।।७।। सं०प्रि०
८. घूघरी मोतन की बाईं रे, जब सांईं मिल्या मुज धाईं रे ।१०। जकडी
९. यूं सब पडिया घांघर घोले, करणे लाग्यां टालं टोले ।१६ ।जकडी

गुजराती

१. कठे पाण शके क्यम तरी ।१२। छप्पा
२. ज्यम सर्पे नर समणामां डस्यो ।६७। छप्पा
३. ज्यम शल्या एक टांकी चीतरी । ६६६ । छप्पा
४. तुंबडुं ज्यम माहेथी मरे तो जे लेइ पेसे ते सहु तरे ।१४। छप्पा
५. गलिया बलदने घाली नाथ । १६८। छप्पा

६. ज्ञानी थई को मारे गाल, मई थई वढ़वानो ख्याल ।२२१ ।छप्पा

७. एम जाणी जपे मळे भगवान, नहि तो अखा वर वोहोणी जाण ।

८. सगुण भक्ति मोती- घूघरी, मनमोहन दीसे ते खरी ।३०५। छप्पा

६. अणछती मध्य माया रही म्हाले, मिथ्या जीव ने घांघर घाले ।छंद १००

निम्नलिखित मुहावरों और कहावतों के अध्ययन से कवि की भाषा की मुहावरे-दानी एवं प्रभावशालीता का भी परिचय प्राप्त किया जायेगा ।

मुहावरे

१. अजब कला अखा सोनारा ऐसो अनुभव चीन्यो । पृ.२३

२. कोउ कहे लीनो अवतार । सं०प्रि० ११५

३. आद्य निरंजन आप अज तांहां कीनो अध्यारोप । सं०पि० २

४. आकाश की नित्य मोट बांधि, भंडार ले अपना भरे । ब्र०ली०

५. भयो न मूल उद्योत, ज्योति आत्मा नहीं जायगो । कुं० ३

६. अनभे खोज लीनो निज जागा । पृ०२२

७. मैं गुलतान भया तुज भीतर | भ-१३

८. चहुंदश चित्त चमकत आप नभो । दामिनी सी दमकाई ।

६. शाह लोक छुपा रहे छाना । भ०६

१०. भेष की टेक चले षटदर्शन भेष नहीं तांहा टेक कहांकी । सं०प्रि०

११. आप हुए तें ठाठ ठठ्यो है । सं०प्रि० ७२

१२. डहेकानो सबे रंक राय कोई होउ । सं०प्रि० १३१

१३. तांबा पणा खोज्या ना पावे, तोल न आया तोटा । भ० ८

१४. आपानां मेटु थाया न थापु । सं०प्रि० ८७

१५. खरे खरो तब कायें, बिरह अंतर में घी के । कुं०२१

१६. प्रकृति पुरुष विवेक, छेकलं नीके आवे । कुं ० ५

१७. सुता नर निद्रा से जागा, फीट गया स्वप्ना सारा । पद २२

१८. बारों मेघ बरसे अखा तहां लागी सके क्युं लाय । सं०प्रि० ६७

१९. भक्ति के भ्रम भटको जु भावे । सं०प्रि० ७६

२०. गुरु ज्ञानी मोहे मरम बताया, तब में सब का हीरदा पाया । प०२०

२१. आप मिथ्या मीट्यो जुं पसारो । सं०प्रि० ७१

२२. मंजन माटी मली मली नायो । सं०प्रि० १०३

२३. तो हु न चेत्यो रंच हीयेंतो । सं०प्रि०

२४. जब लग में था तब तू छाना, अब रग रग में सो आपे । म०८

२५. लागी गई लौ लीना । म०११

२६. सुख को साज मिलावे मनतु दुःख चले दस डग आगे । प०२४

२७. सौवर्णी की समशेर समारी । सं०प्रि० १३३

२८. इस नगरी में ना सुखे सोना । भ० ६

२९. ऐसा खेल भया तन भीतर व्यापा अश सोलुं । मि०८

३०. लालच लोभ की बोली न बोलुं सं०प्रि० ६४

३२५

कहावतें

१. केहे अखा दो कौ रहे म्यान एक तरवारय ।।६।। गुलतान अंग

२. आत्म जान्या बिन अखा ज्यूं काठ की तरवार ।

३. बाहर सोना मुठ है पण काटे नहीं संसार ।३६। चानक अंग

४. कथणी कुकस कुटते शेष न पामे पार ।

५. कुबुद्धि कंकण काच का, सहत ना शबुद घाव । कुमति अंग

६. कनक रेणुं आंख में पडे, तो भी जन दुःख पाय ।१२। उदय कैवल्य अंग

७. अखा ज्युं खांडा हेमका रुणमां न आवे काम ।१४। गुलतान अंग

८. अखा बडा कान खरका, कहा भया आंगल बीस ।११। प्रेम प्रीछ अंग

९. सिंघ न मारत सियाल कुं चोट करत गजराज । अपशीक्षा अंग

१०. अखा गंग की मछली सो छोडत नहीं दुरगंध ।।१।। खल ज्ञान

११. ज्युं गरम भरी बीचरत नहीं, खाली के उनमाद ।।५।। रामरसीया अंग

१२. चींटी मापणा कुंचली, अखा ज्यों गजराज ।१५। सतीको अंग

१३. जैसा चित्र दिपक चीत्रका तेज करे न ताप ।।११।। नीष्टज्ञानी अंग

१४. ज्युं दरपणमें मुख देखीये पण मुख में दरपण नाहे । मासमस्या अंग

१५. देह दरखी सींचत अखा पात पात कुं बीर ।। देहदरसी अंग

१६. दूध पडया ज्युं नाग--मुख सो होत हलाहल फहर ।।३। कुमति अंग

१७. ज्युं दीप देखावत और को पण तले अंधारा मांही ।।१४।। नैराश अंग

१८. अखा संसारी जीव की प्रीत्य सो पुन्यमचंदा । संसारी अंग

१९. अखा खल जन जानीयो, जो तिलमे का पाहाण्य । दुनिया अज्ञानअंग

२०. हुकम बीन हिलता नहीं पीपल पान एक ठोर ।८। कजाका अंग

२१. पकडु पांच भाजे पंनर रेखा हे गाल गोल ।११। कलाका अंग

२२. जे पुतली के नेनां अखा १ देखन के नहीं दोय ।३५। सहेज अंग

२३. दरपण मे का बिंब ज्युं संपुट में न बंधाय ।१८। प्राप्ती अंग

२४. मुक्ता भोजन जे हंस का अन्य पंखी मन पाहाण । ज्ञानीको अंग

२५. तेल न बाती पुट बीना, जैसे रत्न मसाल । लालन को अंग

२६. ज्युं कुंदल सज्या आभूषण माहि नपुंसक तन ।१५ । चानक अंग

२७. अखा लक्षण कुं ना लगे मृग मद फूल बरास । अथ दुनिया अज्ञान अंग

२८. सूरज सीतल नहीं अखा चन्दा गरम न होये । कपटि को अंग

२९. एसे ज्ञान के आगे अज्ञान अखो केहे नागो कांहाकु पहेने कांहाकु नीचोरे ।

— सं०प्रि० ११ पृ०१५८

३०. प्रगट प्रभु प्रमान जैसे चंद्र जैसे मान

हाथ को कंकन आन आरसी न चाहीए । सं०प्रि० ११६ पृ० १६५

अखा की भाषा की अभिव्यंजना शक्ति

संत अखा की रचनाओं का अध्ययन करने पर अनुभव होता है कि उनकी भाषा उनके विचार एवं भावों की अभिव्यक्ति में पूर्ण समर्थ है । विरह, प्रेम, भक्ति, ब्रह्मानुभूति आदि की अभिव्यंजना में अखा की भाषा की अद्भुत शक्ति का अनुभव होता है । हिन्दी भाषा पर अखा का-सा समर्थ एवं अद्भुत शक्ति सम्पन्न अधिकारवाला अखा का पूर्ववर्ती अन्य कोई संत-कवि मध्यकालीन गुजराती साहित्य में नहीं हुआ है ।

यहां अखा की भाषा की अभिव्यंजना शक्ति के उपकारक । १ । उपयुक्त वर्णविन्यास । २ । समुचित शब्दचयन एवं । ३ । भाषा की भाव-ग्राहकता पर संक्षेप में विचार किया जायेगा ।

वर्णविन्यास को दो रूपों में निर्दिष्ट किया जा सकता है -

। अ । भावानुसारी । २ । विषयानुसारी

। अ । भावानुसारी वर्णविन्यास :

अखा की रचनाओं में से विशेषकर जकड़ियां और कतिपय पदों में आद्यंत कोमल एवं माधुर्य भावव्यंजक रमणीय वर्णविन्यास हुआ है :

अ. मेरा ढोलन ढलकर आया रे ।

हुं दधू धोवंगी पाया रे ।

सब सखियन में मैं रानी रे ।

जब लालन की ठकरानी रे ।

तें राख्या मुंह का पानी रे

आ. हरिकुं हेरतां रे सखी में रे हेरानी ।

इन उदाहरणों में कवि ने कर्णप्रिय वर्णों का प्रयोग किया है। ढोलन, ढलकर, आया री, पाया री, हेरतां रे, हेरानी आदि वर्ण उभरे हुए चंचल भाव - मुद्राओं को ध्वनित करने में हर प्रकार से सहायक हैं।

[आ] विषयानुसारी वर्ण-विन्यास

विशेष कर " ब्रह्मलीला " एवं " एकलदारमणी " में दार्शनिक एवं गंभीर उपपत्तियों के निरूपण में विषयोचित एवं सटीक वर्ण- विन्यास दृष्टि-गोचर होता है :

अ. ओम नमो आदि निरंजन राया । जहां नहीं काल कर्म अरूमाय ।

जहां नहीं शब्द उच्चार न जंता, आपे आप रहे उर अंता ।

मिथ्या माया तहां कल्पित अध्यारोप किनो सही

अर्ध मात्रा स्वभाव प्रणव सो त्रिगुण तत्व माया मही ।।१।।

आप ज्यों के त्यों निरंजन सर्व भाव फेली अजा

ज्यों चुंबक देख के लोह चेतन त्यों दृष्टोपदेश पाई रजा ।२।

आ. जगत कहो जगदीश कहो, माया कहो कोई काल ।

सदा मते विज्ञान के, राम रमत एकसाल ।१।

[आ] शबुद चयन

भावों के अनुसार शबुद चयन करनेवाला कवि वस्तुत: महान कवि होता है। सिद्धहस्त कवियों की भाषा में यह विशेषता सन्निहित होती है। अखा के निम्नलिखित उदाहरणों में भाव एवं प्रसंगानुरूप शबुद चयन परिलक्षित होता है :

अ. अकल कला खेलत नर ज्ञानी
जैसैंही नाव हिरे फिरे दशों दिश ध्रुवतारे पर रहत निशानी।
चलन वलन अवनी पर वाकी, मन की सुरत आकाश ठेरानी
तत्व समास भयो है स्वतंतर, जैसे हिम होत है पानी। अकल०
छूटी आध एत नहीं पायो, जह न सकत जहां मन-बानी
ता घर स्थिति भइ है तिनकी कही न जात ऐसी अकथ कहानी।
— अकल०

आ. ज्ञान घटा चढ़ आई अचानक ज्ञान घटा चढ़ आई।
अनुभव जल बरखा बड़ी बुंदन की कीच रेलाई।

उपर्युक्त उदाहरणों में कवि ने अपनी ब्रह्म खुमारी एवं ब्रह्मज्ञानानुभूति का सटिक शबुदों के द्वारा अभिव्यंजन किया है। उदात्त भाव एवं प्रसंग के अनुसार उचित शबद्-विधान से कवि की ये अनुभूतियाँ हमारे हृदय एवं मस्तिष्क में अंकित हो जाती है। उपर्युक्त शबुद विन्यास के कारण सौंदर्य के साथ-साथ समुचित वातावरण चित्रण भी प्रभावात्मक बन पड़ा है।

इ. भाषा की भावग्राह्यता

कई बार भाषा में बाह्याडंबर भी होता है। बाह्याडंबर के कारण

भावों का प्रवाह अवरूद्ध - सा होता है। अखा की भाषा में बाह्याडंबरता का सर्वथा अभाव होने के कारण भावों के प्रवाह में अवरोध एवं बल प्रयोग कहीं भी अनुभव नहीं होता है। अखा की भाषा में सहज प्रांजलता एवं गतिशीलता विद्यमान है। चमत्कार और अलंकारिता उनकी भाषा में स्वत: ही सन्निहित है। ~~स्वस्थ~~ ऋजु एवं स्वाभाविक प्रवाह के साथ-साथ वांछित अलंकारों की अनायास प्रयोग-जन्य शोभा एवं प्रसादात्मकता की दृष्टि से अधोलिखित साखियाँ दृष्टव्य है :-

अ. मैं भी इंडा था अखा, आई अचानक पंख |
अहंता माला छांडीआ, उड्या आप असंख्य ।। रूपक ।

आ. फाल्या फुल्या क्या फिरे काहा देखावे अंग ।। उपमा ।
काल फना हो जायेगा, जैसा रंग पतंग ।।१५।। ~~तमास अंग~~

इ. आत्म अनुभव बिन अखा, धीरज न्होय भाव ।
जद्यपि बुढ़ा बंदरा, टले न चपल स्वभाव ।३३। ~~आत्मांग~~ दृष्टांत

ई. कोइ को लाग्यो भूत ज्यौं, त्यौं मोको लाग्या राम ।।उदाहरण ।
सुख भया सांइयां, सबे रहा सखा का बाम ।।

भारतीय नाट्य शास्त्र के आद्य प्रणेता, "आचार्य भरत" ने नाटक की कसौटी बताते हुए कहा है "लोक प्रामाण्य नाटकम्" उसी प्रकार "संत काव्य" की सफलता की कसौटी उसकी "सर्वजनप्रियता" और "हृदयग्राहता" हो सकती है। कवि की भाषा जितने बड़े जन समुह के हृदय को स्पर्श कर सकती

है - प्रभावित कर सकती है, वह अपने लक्ष्य में उतना ही अधिक सफल और महान होता है। महर्षि अरविंद ने अपने पत्रों में इसी को लक्ष्य करते हुए कहा है कि " भाषा और शैलीगत सौंदर्य से सम्पन्न होने के अनंतर भी यदि उसमें हृदय को प्रभावित करने की सामर्थ्य नहीं है, शक्ति नहीं है तो वह काव्य " चिर स्थायी " नहीं हो सकता"।[१]

अखा की स्वाभाविक भाषा में उनका व्यक्तव्य निहित है। वास्तव में सच्चे कवि की भाषा अकृत्रिम ही होती है; यह कैसे हो सकता था कि उनके सदृश एवं सच्चे संत को कृत्रिम भाषा का सहारा लेना पड़ता। उनकी भाषा उनके भावों की अनुगामिनी है।

" अखा " की रचनाओं का [१] भाषा की दृष्टि से शुद्ध संपादन न होने के कारण [२] प्रथम बार संपादित ग्रंथ की भूलें द्वितीय बार के संपादनों में भी चले आने के कारण [३] कतिपय अप्रचलित शब्दों के प्रयोग के कारण और [४] कभी कभी हस्तलिखित पोथियों की अस्पष्ट लिखावट के कारण कहीं कहीं प्रतिपाद्य के संदर्भ और अर्थ को समझने में कठिनाई अवश्य प्रतीत होती है ' तथापि यह कहा जा सकता है कि अखा की भाषा " कूट " नहीं है। किसी भी कवि की भाषा " कूट " तभी होती है जब वह " कृत्रिम " हो, और कृत्रिम तभी होती है जब कवि की अनुभूति में सच्चाई, निबिड़ता एवं स्वाभाविक उद्रेक न हो। अखा की अनुभूतियाँ सच्ची, निबिड़ एवं सहज है। अत: कहा जा सकता है कि अखा की भाषा " सहज " है।

अखा की भाषा में कहीं - कहीं जो ध्वन्यात्मक गड़बड़ी, शब्दों की

---

१. It may be quite true that fine and telling rhythms without substance (substance of idea suggestion, feeling) are hardly poetry at all, even if they make good verse - -Letters of Shri Aurobindo. (Third Series), Page 11

तोड़-मरोड़ और अन्य भाषाओं का मिश्रण दृष्टिगोचर होता है, वह प्रयत्नज न होकर स्वाभाविक है : क्योंकि अखा की भाषा अपने युग के संतों की भाषा है। अतः यदि भाषा में कहीं अव्यवस्था दीख पड़ती है तो वह उनकी वाणी का दोष नहीं है, उस समय की लोक भाषा की प्रवृत्तियाँ वैसी ही थी। अखा को जो भाषा परंपरया मिली उसमें आज की-सी भाषानुसार प्रांतीयता की विभाजन रेखा नहीं खींची गई थी। विशेष कर राजस्थानी व्रज भाषा और गुजराती में बहुत ऐक्य था। इस ऐक्य के कारण एक ही भाषा भाषी अन्य स्थानों की भाषा को सरलता से लिख बोल सकते थे। दूसरा कारण यह है कि कबीर की भाँति अखा "जंगम संत" थे। आत्म साक्षात्कार प्राप्त करने के पूर्व की अवस्था में सच्चे गुरु की खोज में अखा गुजरात से लेकर व्रज, बनारस, पंजाब, मारवाड़ आदि क्षेत्रों में गये ही थे। अतः उन प्रदेशों की भाषा से उनका संपर्क अवश्य हुआ था। कहा जा सकता है कि सिद्धांतः संकुचित प्रांतीयता और क्षुद्र मत मतांतरों के विरोधी होने के कारण संत अखा ने व्यापक देश भाषा को साहित्य-रचना के लिए चुना।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि अहिंदी भाषा भाषी होते हुए भी अखा की भाषा संक्षिप्ति, लाक्षणिकता एवं व्यंजकता के साथ-साथ सरलता एवं संप्रेषणीयता की दृष्टि से हिन्दी के किसी भी समर्थ संत की भाषा के साथ तुलनीय है।